Purva Mimaansa
A Multi-discipinary Bi-annual Research Journal
(Double Blind Peer Reviewed)

Vol. 8 No. 1-2, March-Sep. 2017
ISSN : 0976-0237

भारतीय दर्शन में भाषा के स्वरूप का विश्लेषण

नरपाल सिंह

भारतीय द ार्शन में 'भाब्द' की उत्पत्ति, स्वरूप, नित्यता तथा भाब्दार्थ के सम्बन्ध में विभिन्न सिद्धान्त प्रस्तुत किये गये हैं। इसके सम्बन्ध में नैयायिक तथा मीमांसकों में मुख्य रूप से वाद–विवाद रहा है। अकेले मीमांसा द ार्शन में ही भाब्दार्थ के विषय में दो मत 'अन्विताभिधानवाद' प्रभाकर द्वारा तथा 'अभिहितान्वयवाद' कुमारिल द्वारा प्रस्तुत किये गये हैं। व्याकरण की दृष्टि से भाब्द के सम्बन्ध में दो मत हैं–' ाब्दस्फोटवाद' तथा 'वाक्यस्फोटवाद'। भाब्दस्फोट को मानने वाले वाक्य के प्रत्येक भाब्द का स्फोट मानते हैं। प्रत्येक भाब्द का स्फोट मानने में उन्हे भाब्द को कई कोटियों में विभक्त करना पड़ता है जबकि वाक्यस्फोटवादी वाक्य को ही 'भाब्द' या 'वर्ण' या 'अर्थ ' कहते हैं। ये वाक्य का विभाजन स्वीकार न करके वाक्य को अखण्ड व एक मानते हैं। 'अष्टाध्यायी' रचयिता पाणिनी, 'निरुक्त' रचयिता यास्काचार्य, पतंजलि प्रभृति, नैयायिक व मीमांसा द ार्शन के कुमारिल भट्ट भाब्दस्फोटवाद के समर्थक हैं। 'वाक्यपदीय' रचयिता भर्तृहरि, प्रसिद्ध व्याकरण ाास्त्री औदुम्बारायण, वार्ष्याणि व मीमांसा द ार्शन के प्रभाकर वाक्यस्फोटवादी विचारधारा के समर्थक हैं। लगभग सभी व्याकरण भाास्त्रियों एवं दा ार्शनिकों का भाषा वि ेलषण उपरोक्त दोनों विचारधाराओं के अन्तर्गत समाहित है। भाब्द के गूढ़ व विषद विवेचन को देखते हुए प्रस्तुत भाोध–पत्र में 'भाब्द' के सम्बन्ध में विभिन्न व्याकरण भाास्त्रियों तथा भारतीय दा ार्शनिकों के सिद्धान्तों का विवेचन एवं वि ेलषण किया जायेगा।

कूट शब्द– भाब्द, स्फोट, भाब्दस्फोटवाद, वाक्यस्फोटवाद, अन्विताभिधानवाद, अभिहितान्वयवाद।

भारतीय भाषा तत्त्व शास्त्र गूढ़ एवं वैज्ञानिक है। समय–समय पर विभिन्न भाषा तत्त्व विद्वानों ने भाषा की गूढ़ता एवं वैज्ञानिकता पर प्रकाश डाला है। भाषा हमारे ज्ञान का एक माध्यम है। हमारे दैनिक क्रियाकलापों में संचार के माध्यम के रूप में भाषा का महत्त्वपूर्ण योगदान है। भाषा के बिना हम अपनी भावनाओं, विचारों की अभिव्यक्ति नहीं कर सकते हैं। भाषा की इकाई वाक्य है तथा वाक्य का निर्माण पदों या शब्दों से होता है। हमारे भाव को व्यक्त करने का प्रमुख साधन भाब्द है। अतः भाषा का मौलिक आधार शब्द है। शब्द के ज्ञान के बिना कोई भी भाषा विद्वान भाषातत्त्वविद् नहीं कहा जा सकता है। अधिकाँ ा भारतीय दा ार्शनिकों ने भाब्द को ज्ञान का एक प्रमुख साधन (प्रमाण) माना है। न्याय द ार्शन में आप्त पुरूष के वचनों को भाब्द कहा गया है– आप्तोपदेशः शब्दः।1 आप्त पुरूष वह है जिसने पदार्थ का यथार्थ ज्ञान (साक्षात्कार) प्राप्त कर लिया हो।

शब्द की संरचना– शब्द का निर्माण अक्षरों, स्वरों, वर्णों व व्यंजनों से मिलकर होता है। अक्षर मौलिक ध्वनि या सिद्ध ध्वनि है, जिन्हें अंग्रेजी में 'फोनिम' (Phonim) कहते हैं। अक्षर नित्य व शाश्वत है। मौलिक अक्षर 17 हैं– अ ऋ इ उ, क च ट त, प य र ल व ह श ष स।

वर्ण अक्षरों के भेद को कहते हैं अर्थात् ध्वनियों के भेद वर्ण कहलाते हैं। व्यवहारिकता में या लिखित में मात्रायें वर्ण का संकेत करती हैं। लिखित संकेतावली में इन्हें समाम्नाय भी कहा जाता है। वर्णों को अंग्रेजी में 'फोनेमिक्स' कहा गया है। प्रत्येक अक्षर के कुल 109 भेद हैं। जपमाला में तुलसी के 108 दाने तथा सुमेरू (मोटा दाना) होता है। यह सुमेरू एक अक्षर है तथा 108 दाने उसके भेद हैं। अक्षर

शोधार्थी, दर्शनशास्त्र विभाग, हे0न0ब0ग0वि0, श्रीनगर, गढ़वाल, उत्तराखण्ड

Vol. 8 No. 1-2, March-Sep. 2017
ISSN : 0976-0237

और वर्ण अंग्रेजी के 'लेटर' नहीं हैं। अक्षरों या वर्णों की लिखित संकेतावली को लेटर कह सकते हैं। स्वर अक्षरों की अनेक ध्वनियों में श्रुत वर्ण भेदों को कहते हैं। 'स्वर' शब्द स्वृ धातु से निकला है, जिसका अर्थ है–स्फुट ध्वनि (स्वर ध्वनि)। आ, ई, ऊ, ए, ऐ, औ, औ सात स्वर कहे गये हैं। व्यंजन आधी या अंश या अधुरी अस्फुट ध्वनियाँ हैं। व्यंजन, वि तथा अंजन दो शब्दों से मिलकर बना है। वि का अर्थ है– विभिन्न प्रकार के तथा अंज् का अर्थ सूक्ष्म स्पर्श वाले (क्षणिक स्पर्श वाले)। जैसे–क का अधूरा स्फुटन क् है। यह क् व्यंजन है।

वृत्ति ध्वनि की गति या चाल है । वृत्ति को ध्वनि का वाहन कहा गया है। वृत्ति तीन प्रकार की होती है– द्रुत (तीव्र), मध्यमा तथा विलम्बिता। पढ़ने की वृत्ति द्रुत होती है। साधारण बोलचाल मध्यमा वृत्ति में होती है। शिक्षण या व्याख्यान विलम्बित गति में होता है। मध्यमा वृत्ति को सबसे उपयुक्त वृत्ति बताया गया है।

शब्द की उत्पत्ति तथा नित्यता– भर्तृहरि के साथ–साथ सांख्य द र्शन तथा मीमांसा दर्शन में अनेक भाषा विद्वानों ने शब्द को नित्य तथा अविनाशी बताया है। भर्तृहरि की वाक्यपदीयम् में पहली कारिका यही है–

अनादिनिधनं ब्रह्म शब्दतत्त्वं यदक्षरम्
विवर्ततेऽर्थभावेन प्रक्रिया जगतो यतः।2

अर्थात् शब्द अनादि, अविनाशी एक तत्त्व है। शब्द ब्रह्मरूप है। यह उत्पत्ति और विनाश से परे है। विभिन्न पदार्थों के रूप में यही (शब्द) परिवर्तित होता रहता है। सम्पूर्ण जगत की प्रक्रिया इसी (शब्द रूपी ब्रह्म) से आरम्भ होती है। कुछ विद्वान शब्द को नित्य तथा कुछ अनित्य मानते हैं। न्याय–वैशेषिक दार्शनिकों तथा मीमांसकों में शब्द की नित्यता और अनित्यता को लेकर विशेष रूप से वाद–विवाद रहा है। नैयायिकों का शब्द की अनित्यता का सिद्धान्त शब्द अनित्यवाद तथा मीमांसकों का शब्द की नित्यता का सिद्धान्त शब्द नित्यवाद कहलाता है।

शब्द अनित्यवाद– नैयायिकों के अनुसार मनुष्य के शब्द उच्चारण के प्रयत्न से ही शब्द की उत्पत्ति होती है। उत्पत्ति और विनाश के कारण ही नैयायिक शब्द को अनित्य मानते हैं। जिसका स्वरूप नष्ट हो जाता है, उसे अनित्य कहते हैं। महर्षि वात्स्यायन ने शब्द का लक्षण इस प्रकार बताया है–

आकाशगुणः शब्दः।3

अर्थात् भाब्द आकाश द्रव्य का विशेष गुण है। श्रोत इन्द्रिय से ग्रहण करने वाले गुण को शब्द कहते हैं। भेरी या मृदंग या बाँस के फटने से उत्पन्न प्रथम शब्द, मध्यम शब्द का आकाश द्रव्य के माध्यम से श्रोता को अन्तिम शब्द ग्रहण होता है। शब्द के उत्पत्ति स्थान से लेकर श्रोता तक पहुँचने तक शब्द तीन प्रकार का होता है– प्रथम शब्द, मध्यम शब्द, तथा अन्तिम शब्द। भेरी से होने वाले प्रथम शब्द की उत्पत्ति में दण्ड तथा भेरी का संयोग निमित्त कारण, भेरी तथा आका ा का संयोग असमवायी कारण होता है। जिस प्रकार पानी में कंकड़ फेंकने पर प्रथम, द्वितीय, तथा अन्तिम लहरें उत्तरोत्तर उत्पन्न होती हैं उसी प्रकार प्रथम शब्द उत्पत्ति स्थान से उत्तरोत्तर अन्तिम शब्द अर्थात् श्रोता तक पहुँचता है। संयोग तथा विभाग से उत्पन्न होने के कारण यह शब्द दो प्रकार का होता है–1. संयोगज भाब्द– दण्ड तथा भेरी के संयोग से उत्पन्न शब्द, 2. विभागज भाब्द– बाँस के चीरने या फटने अर्थात् विभाग से उत्पन्न शब्द। विभागज भाब्द में बाँस के दोनों दल का विभाग निमित्त कारण है तथा दल और आकाश

का विभाग असमवायी कारण है। मध्यम तथा अन्तिम शब्दों की उत्पत्ति का तो शब्द ही असमवायी कारण होता है तथा अनुकूल वायु निमित्त कारण होता है। प्रथम, मध्यम, और अन्तिम शब्द तीनों का समवायी कारण आकाश (द्रव्य) होता है। वैशेषिक दर्शन में शब्द की व्याख्या इस प्रकार की गई है–

श्रोतग्रहणो योऽर्थः स शब्दः।4

अर्थात् हमारी श्रवण इन्द्रिय जिस अर्थ में विषय को ग्रहण करती है, वही शब्द है। शब्द की उत्पत्ति दो कठोर पदार्थों के परस्पर संयोग या वियोग से होती है। मनुष्य में ध्वनि की उत्पत्ति स्वर यंत्र से होती है। जो शब्द हम बोलते हैं उसकी क्रिया वाक् इन्द्रिय द्वारा सम्पन्न होती है।

मानव शरीर में ध्वनि उत्पन्न करने वाले यंत्र को स्वर यंत्र (Voice box) कहा गया है। जिसके अन्दर अर्द्धेन्दु (Epiglotis), कण्ठविल (Pharynx), श्वासनली (Larynx), कोष्ठ या फेफड़े (Lungs), जिह्वा (Tongue) ओष्ठ (स्पचे) तथा तालु (Upper pallet) आदि आते हैं। ध्वनिशास्त्र में ध्वनि क्रिया का अलंकारिक वर्णन किया गया है। ध्वनिशास्त्रों में जिह्वा को सरस्वती या वीणापाणि कहा गया है। शेष स्वरयंत्र को स्वर या ध्वनि उत्पन्न करने वाला यंत्र वीणा कहा गया है जिसे हमारी जिह्वारूपी सरस्वती बजाती है और तब शब्द या ध्वनि अभिव्यक्त होती है। जब प्राण वायु उदर या फेफड़ों से विवृत होकर श्वासनली (Larynx) द्वारा कण्ठविल (Pharynx) में आती है तब श्वासता (अघोषता) होती है और जब यही प्राण वायु फेफड़ों से संवृत (अल्पविवृत) होकर आती है तो नादता (घोषता) या ध्वनि होती है। ध्वनि किस प्रकार की या किस शब्द की होनी है यह हमारी जिह्वा अपने लचीलेपन द्वारा विभिन्न आकृतियों में बदलकर तय करती है अर्थात् अर्द्धेन्दु तथा कण्ठविल से निकले प्राणवायु को ध्वनि तारों के रूप मे बजाकर जिह्वा शब्द या ध्वनि तय करती है। ''ध्वनि होने का कारण अर्द्धेन्दु के किनारों का झनझनाना होता है, इसी में ध्वनि तार होते हैं। इनके बंद रहने को संवृत और खुले होने को विवृत कहते हैं। **कण्ठविल ध्वनियों का मुख्य द्वार है।''5**

केशव मिश्र ने तर्क भाषा में शब्द या पद की व्याख्या इस प्रकार की है– **पदं च वर्णसमूहः।6** अर्थात् वर्ण समूह पद कहलाता है। यहाँ वर्ण समूह का अर्थ अनेक वर्ण नहीं अपितु एक ज्ञान में बोधित होने वाले वर्णों का नाम पद या शब्द है। वर्ण समूह में पूर्व और बाद के वर्ण क्रमवान होने पर वह वर्णसमूह अर्थवान होगा। वर्णसमूह से पद प्रतीति होती है। विरोधियों का कहना है कि क्रमिक और क्षणिक अनेक वर्ण एक साथ अनुभव नहीं किये जा सकते हैं क्योंकि पहले उत्पन्न हुए वर्ण बाद में उत्पन्न वर्णों से पहले नष्ट (शीघ्रतर विनाशी) होते जाते हैं। इस पर मीमांसक तथा वैयाकरण शास्त्री कहते हैं कि अन्तिम वर्ण के श्रवण के समय पूर्व में उत्पन्न वर्णों के अनुभव से उत्पन्न संस्कारों से अन्तिम वर्ण से सम्बन्ध पद और अर्थ व्युत्पन्न होता है। श्रोत इन्द्रिय द्वारा एक काल मे ही विद्यमान या सत् (अन्तिम वर्ण) और अविद्यमान या असत् (नष्ट हुए पूर्व वर्ण) अनेक वर्णों का ग्रहण करने वाली पद प्रतीति होती है, जिसमें नष्ट हुए वर्णों के ज्ञान के लिए श्रोत इन्द्रिय को तीन सहकारी की आवश्यकता होती है– 1. पूर्व में नष्ट हुए वर्णों के अनुभव से उत्पन्न होने वाला संस्कार, 2. अन्तिम वर्ण का श्रोत इन्द्रिय से ग्रहण किया जाना, 3. श्रोता को होने वाली पद प्रतीति। अतः पद प्रतीति में नष्ट हुए वर्णों के संस्कार तथा अन्तिम वर्ण के लिये स्मरण एंव प्रत्यक्ष दोनों रहते हैं। वाक्य के सम्बन्ध में नैयायिकों का मत शब्द (पद) के समान है। जिस प्रकार वर्ण समूह को पद कहा गया है उसी प्रकार पद समूह को वाक्य कहा गया है–

पदानां समूहो वाक्यम्।7

Vol. 8 No. 1-2, March-Sep. 2017
ISSN : 0976-0237

अर्थात् अनेक पदों या पद समूह को वाक्य कहते हैं। प्रत्येक पद समूह वाक्य नहीं हो जाता अपितु वाक्यरूपी पद समूह के लिये कुछ लक्षण या शर्ते होती हैं–

वाक्यं त्वाकाङ्क्षायोग्यतासन्निधिमताम् पदानां समूहः ।8

अर्थात् पद समूह या वाक्य आकाँक्षा, योग्यता तथा सन्निधि से युक्त पदों का समुदाय है। आकांक्षा वाक्य का सबसे पहला लक्षण है। एक पद को अन्य पद की अपेक्षा होती है। यह अपेक्षा आकाँक्षा कहलाती है परन्तु यह आकाँक्षा अर्थपूर्ण पद की होती है। अर्थपूर्ण पदों की आकाँक्षा से ही वाक्य बनता है। योग्यता वाक्य निर्माण की दूसरी शर्त है। अर्थपूर्ण पदों के समूह से वाक्य नहीं बनता है जब तक कि उन सभी पदों में परस्पर विरोध का अभाव न हो। इसे ही पदों की योग्यता कहते हैं। सन्निधि वाक्य निर्माण का तीसरा लक्षण है। यदि आकाँक्षा, योग्यता के रहने पर भी पदों में स्थान तथा समय की समीपता न हो तो वह वाक्य नहीं कहलायेगा। अतः वाक्य में पदों के स्थान तथा समय की दूरी का अभाव होना चाहिये। गौतम ऋषि ने वाक्य प्रतीति के उपरोक्त तीन लक्षण बताये हैं परन्तु अन्य नैयायिकों ने उपरोक्त तीन लक्षणों के साथ–साथ एक अन्य चौथा लक्षण 'तात्पर्य' भी बताया है। समय, प्रसंग या परिस्थिति के अनुसार एक शब्द या पद के अर्थ भिन्न–भिन्न हो सकते हैं। अतः वाक्य सुनने वाले या पढ़ने वाले व्यक्ति को, वाक्य कहने वाले या लिखने वाले व्यक्ति का अभिप्राय समझ लेना चाहिये। इस अभिप्राय को ही तात्पर्य कहते हैं। इन चार शर्तों से ही वाक्य प्रतीति होती है। शब्द की अनित्यता के सम्बन्ध में नैयायिक कहते हैं–

आकाशगुणः शब्द उत्पत्तिनिरोधधर्मको बुद्धिवत् इत्यपरे ।9

अर्थात् शब्द आकाश का गुण है। उत्पत्ति और विनाश (निरोध) शब्द के धर्म हैं बुद्धि (ज्ञान) की तरह। अनुमान प्रमाण से शब्द का अनित्यत्व सिद्ध होता है–

आदिमत्त्वादेन्द्रियकत्वात् कृतकवदुपचाराच्च ।10

अर्थात् आदि होने के कारण, इन्द्रिय ग्राह्य होने के कारण अन्य पदार्थों की तरह शब्द अनित्य है। जिसका कोई कारण हो अर्थात् किसी अन्य से उत्पन्न हुआ है वह अनित्य होता है तथा जो भी इन्द्रिय सन्निकर्ष से ग्राह्य होता है वह अनित्य होता है, जैसे–घटादि इन्द्रिय सन्निकर्ष से ग्राह्य होकर अनित्य है उसी प्रकार शब्द भी अनित्य है।

शब्दनित्यवाद– मीमांसा मत के अनुसार वर्ण ही शब्द हैं। शब्द नित्य है क्योंकि नित्य वर्ण अक्षर (शब्द) का उत्पत्ति और विनाश नहीं होता है। वर्ण के द्वारा हम जिसका ग्रहण करते हैं, वह शब्द की ध्वनि मात्र है। यह ध्वनि वर्ण या शब्द के उत्पादक न होकर उसके अभिव्यंजक मात्र है अर्थात् ध्वनि नित्य शब्द की अभिव्यक्ति है जो अनित्य है। महर्षि शबर स्वामी के अनुसार लोक में श्रोत इन्द्रिय से जिसका ग्रहण होता है उसे शब्द कहा जाता है। अर्थबोधकता शब्द का लक्षण नहीं है श्रोतग्राह्यत्व शब्द का लक्षण है। यह श्रोतग्राह्यत्व गकार, औंकार आदि वर्णों में घटित होता है। अतः गकार आदि वर्ण ही शब्द हैं। शब्द का अर्थबोध वृद्ध व्यवहार से होता है। जिस शब्द से जिस अर्थ का बोध देखा जायेगा उस शब्द से उस अर्थ की वाचकता मानी जायेगी। क्रम से उच्चारित वर्णों में ही अर्थबोधन शक्ति है। सभी देश और काल में गकार आदि वर्ण एक ही है, भिन्न–भिन्न नहीं है।

प्रभाकर के अनुसार आकाश का गुण रूप शब्द नित्य है। शब्द की नित्यता अनुमान प्रमाण से सिद्ध है। आकाश मात्र का गुण होने से, जो आकाश मात्र का गुण होता है, वह अवश्य ही नित्य होता है। शब्द वर्ण की नित्यता प्रत्यक्ष (प्रत्यभिज्ञा) प्रमाण द्वारा भी सिद्ध है। प्रत्यभिज्ञा में गकार वर्ण को जो

Vol. 8 No. 1-2, March-Sep. 2017
ISSN : 0976-0237

हमने पहले सुना था, यह वही गकार है ऐसी अभेद प्रतीति शब्द की नित्यता सिद्ध करती है। यदि ऐसा नहीं होता है तो हम यह नहीं कहते कि यह वही गकार है। कुमारिल भट्ट ने शब्द को द्रव्य माना है। ''शब्द नित्य है, स्पर्श गुण के रहित द्रव्यरूप होने से जो–जो स्पर्श से रहित 'द्रव्य' होता है, वह सर्वदा नित्य ही होता है, जैसे– आकाश स्पर्श रहित द्रव्य होने से 'नित्य' माना जाता है। उसी प्रकार शब्द भी स्पर्श रहित द्रव्य रूप होने से उसको नित्य ही कहना होगा।''11 अनुमान प्रमाण से शब्द की नित्यता सिद्ध है क्योंकि जो–जो पदार्थ साक्षात् सम्बन्ध से इन्द्रिय ग्राह्य होते हैं, वह द्रव्य पदार्थ ही होते हैं।

वैयाकरणों ने भी शब्द को नित्य माना है। उनके अनुसार वर्णों के समुदाय को पद कहते हैं। चूंकि पद में स्थित एक–एक वर्ण से तथा वर्ण समुदाय से तब तक अर्थबोध होना सम्भव नहीं है जब तक 'पदस्फोट' को न माना जाये। उस नित्य पदस्फोट के ज्ञान से ही अर्थ का स्मरण श्रोता को होता है। 'पदस्फोट' के आधार पर ही शब्द नित्य है।

ध्वनिशास्त्र में शब्द को 'स्फोट', 'पद', 'वचन', 'स्वं रूपं' आदि नामों से सम्बोधित किया गया है। स्फोट के ज्ञान के बिना कोई भी भाषा का ज्ञाता भाषातत्त्वविद् नहीं कहा जा सकता है। भारतीय दार्शनिकों व भाषातत्त्व शास्त्रियों के भाषा ज्ञान की पराकाष्ठा का आधार 'स्फोटवाद' सिद्धान्त है। स्फोटवाद के भी दो रूप हैं– शब्दस्फोटवाद तथा वाक्यस्फोटवाद। शब्द स्फोटवादी स्फोट को शब्द कहते हैं जबकि वाक्यस्फोटवादी स्फोट को वचन (वाक्य) कहते हैं।

स्फोटवाद– 'स्फोट' स्फुट धातु से बना है। ध्वनिशास्त्र में स्फोट का सबसे पहले प्रयोग 'स्फोटण' नाम से किया गया । जिसका विवरण प्रातिशाख्यों जैसे– कात्यायन प्रातिशाख्य में मिलता है। विद्वानों ने स्फोट तथा स्फोटण में अन्तर किया है। स्फोटण का अर्थ ध्वनि की स्फुटता है। सन्निपात के व्यंजनों के प्रथम व्यंजन की ध्वनि की स्फुटता स्फोटण है जबकि एक ध्वनि की स्फुटता स्फोट है। स्फोटण के प्रयोग की सीमा केवल व्यंजन सन्निपात तक है और स्फोट का क्षेत्र या सीमा सब प्रकार के संयोग और सन्निपात से बने शब्द, पद और वचन तक है। स्फोट और स्फोटण दोनों का लक्षण ध्वनि की स्फुटता है। स्फोटण में ध्वनि विस्तार किया जाता है जबकि स्फोट में ध्वनि या ध्वनियों का सामूहिक उच्चारण होता है।

शब्द या स्फोट को ध्वनि चित्र कहा गया है जो अनेक ध्वनियों की संरचना, व्यवस्था व वर्णसमूह से स्फोट ध्वनि का निर्माण करता है। स्फोट की अभिव्यक्ति ध्वनि है। ''स्फोट का वास्तविक अर्थ ध्वनि चित्र है, चह चित्रता है। चित्रता या विचित्रता अनेक ध्वनियों की संरचना व्यवस्थामयी सामूहिकता है। अन्तिम ध्वनियों का एक सामूहिक चित्र 'स्फोट', या स्वं रूपं, या वचनं, नाम से पुकारा जाता है। प्रत्येक वाक्य या शब्द की अन्तिम ध्वनि उसकी सम्पूर्ण ध्वनियों के चित्र को एकाएक उपस्थित करती है। इसी उपस्थित होने वाले ध्वनि चित्र को स्फोट कहते हैं। ध्वनि चित्र माने, ध्वनि प्रकाश है। अतः स्फोट भी प्रकाश है।''12 शब्द के लक्षण के बारे में उपनिषदों में कहा गया है। कि शब्द विद्युत, विद्युतमय और प्रकाशमय है। भर्तृहरि ने शब्द को ज्योति कहा है। शुद्ध और पवित्र ज्योतिरूप शब्द परमाणु या अतिसूक्ष्मतम अणुरूप में विद्यमान होते हैं। जो अणु है, वही ज्योति है, वही शब्द है। अतः स्फोट या शब्द ज्योति अणु, विद्युत अणु, ध्वनि अणु, ज्ञान अणु तथा प्रकाश अणुरूप है। वाक्यपदीय में स्फोट को भाषा की आत्मा कहा गया है–

ध्वनयः समुपोहन्ते स्फोटात्मा तैर्नभिद्यते।13

अर्थात् स्फोट निरवयव और शब्द या वाक्य में व्याप्त अन्तिम ध्वनि से प्रज्वलित दीप सम भाषा की

Vol. 8 No. 1-2, March-Sep. 2017
ISSN : 0976-0237

आत्मा है। जब हम किसी शब्द को प्रथम बार सुनते हैं तब स्फोट का चित्र हमारी बुद्धि में परिपक्व या पूर्ण रूप से नहीं बन पाता है अतः स्फोट के चित्र को बुद्धि में स्थिर करने के लिए शब्द की ध्वनि की कई बार आवृत्ति हो जानी आवश्यक है।

स्फोट, नाद (ध्वनि) तथा अर्थ में सम्बन्ध बताते हुए भर्तृहरि कहते हैं कि शब्द में दो उपादान रूप होते हैं– एक निमित्त तथा दूसरा अर्थ। निमित्त (माध्यम) रूप शब्द को 'नाद' या 'ध्वनि' कहा जाता है। यह निमित्त इसलिए है क्योंकि यह प्राकृत ध्वनि (स्फोट) को अभिव्यक्त करता है। अर्थ रूप शब्द को स्फोट कहते हैं। स्फोट (अर्थ या प्राकृत ध्वनि) की अभिव्यक्ति नाद या ध्वनि (वैकृत ध्वनि) से होती है। स्फोट सूक्ष्म है तथा ध्वनि स्थूल है। स्फोट कारण है तथा ध्वनि कार्य है। स्फोट तथा स्फोट से संकेतित पदार्थ अलग है फिर भी भाषा में इन दोनों का सम्बन्ध जड़ और आत्मा का सा नित्य सम्बन्ध माना गया है। स्फोट वृत्तिहीन होता है। प्राकृत ध्वनि, वैकृत ध्वनि का मौलिक शरीर है, वैकृत ध्वनि मौलिक ध्वनि का विकसित रूप है। स्फोट की प्राकृत ध्वनि के उपरान्त शब्द की अभिव्यक्ति के साथ–साथ वृत्तियों के भेद से युक्त होकर जो ध्वनि उत्पन्न होती है, उसे वैकृत ध्वनि कहते हैं। स्फोट और वाद (ध्वनि) की वास्तविकता प्रतिबिम्ब और प्रतिबिम्बीय पदार्थ के जैसी है। अभिव्यक्त स्फोट अर्थात् ध्वनि अर्थप्रत्यात्मक होती है। स्फोट शब्द से संकेतित पदार्थ कोई व्यक्ति, जाति, क्रिया, संज्ञी, संज्ञा, अर्थ, गुण या गुणीं हो सकता है। इस आधार पर स्फोटवाद के दो रूप हैं–शब्दस्फोटवाद एवं वाक्यस्फोटवाद।

शब्दस्फोटवाद– शब्द स्फोटवादी वाक्य के प्रत्येक शब्द का स्फोट मानते हैं। इस प्रकार इन्हें एक वाक्य को शब्दों की विभिन्न कोटियों में विभक्त करना पड़ता है। निरूक्त रचयिता यास्काचार्य ने शब्द या स्फोट से संकेतित पदार्थ को संज्ञा कहा है। ये संज्ञायें चार प्रकार की होती हैं– नाम, आख्यात (क्रिया), उपसर्ग और निपात। शब्द स्फोटवादियों के अनुसार ''जब तक हम वाक्य के उक्त भेद नहीं करते तब तक हमें यह कैसे पता चलेगा कि वाक्य के सिर कहाँ है और पैर कहाँ है अर्थात् वाक्य में उद्देश्य कौन है, विधेय कौन है तथा संज्ञादि भाग कौन–कौन हैं ?अतः प्रत्येक शब्द के स्फोट की मान्यता के बिना किसी भी वाक्य का अर्थ नहीं लग सकता।''14 कात्यायन जी ने संज्ञा के दो रूप अर्थात् संज्ञा के स्थान पर 'अर्थ' तथा 'वाची' शब्द प्रयुक्त किये हैं। महर्षि पतंजलि ने वाक्य के संकेतक पदार्थ संज्ञा को चार रूपों– अर्थ, संज्ञी, व्यक्ति तथा जाति बताया है। पतंजलि ने ही यास्क के शब्द को सर्वप्रथम 'स्फोट' कहा था। पाणिनी आचार्य भी शब्दस्फोट का समर्थन करते हैं।

वाक्यस्फोटवाद– वाक्य स्फोट को मानने वाले सर्वप्रथम वार्ष्यायणि जी थे। उन्होंने स्फोट (वचन) से संकेतित पदार्थ को संज्ञा के स्थान पर 'भाव' कहा है। उनके अनुसार यह भाव छः प्रकार का होता है– ''उत्पत्ति, स्थिति, विशेष परिणाम, विवृद्धि, अपक्षय और विनाश। प्रत्येक वाक्य इन्ही छह भेदों की व्याख्या करता है।''15 औदुम्बारायण जी ने शब्द को वचन कहा है तथा वचन से संकेतित पदार्थ संज्ञा के स्थान पर 'भाव' भाब्द का प्रयोग किया है। भर्तृहरि जी ने शब्द (स्फोट) को 'व्यक्ति' कहा है। भर्तृहरि ने व्यक्ति से संकेतित पदार्थ संज्ञा के स्थान पर 'जाति' शब्द का प्रयोग किया है– जाति प्रत्यायिता व्यक्तिः प्रदेशेषूपतिष्ठते।16 भर्तृहरि जी के अनुसार स्फोट एकात्मा, अखंड, अक्रम और एकरूप है। वर्णों और पदों की अखण्डता ही वाक्य है। वाक्य ही भाषा तत्त्व शास्त्र की एक मात्र मुख्य इकाई है। ''वाक्य स्फोटवादी मत में पदादि भेद काल्पनिक हैं, सत्तावान नहीं हैं, सत्ता केवल व्यवहारिक वाक्य या वाक्य स्फोट की है जिसमें एकत्व और अखंडत्व दोनों हैं।''17

शब्द या भाषा या वाक्य या परिच्छेद या निबन्ध का उनसे पृथक कोई अर्थ नहीं हो सकता है।

Vol. 8 No. 1-2, March-Sep. 2017
ISSN : 0976-0237

मातृभाषा को सिखाते समय पद या वर्ण नहीं सिखाये जाते है अपितु वाक्य की शिक्षा दी जाती है। जैसे–गाय लाओ, दही खाओ आदि। वर्ण और पद अपना स्वरूप व्यंजित करते हुए वाक्य में तिरोहित हो जाते हैं। ध्वनि हुई नहीं कि स्फोट प्रकट हुआ, स्फोट प्रकट हुआ नहीं कि अर्थ लग गया। इस प्रकार स्फोट (शब्द), नाद (ध्वनि) और अर्थ तीनों में एक अद्वैत एकत्व है। एक के सामने आने से सब सामने आ जाते हैं। व्याकरण शास्त्र के अतिरिक्त दर्शन में भी शब्द से संकेतित पदार्थों को भिन्न–भिन्न माना गया है। दर्शन में भाब्दार्थ से सम्बन्धित सिद्धान्त इस प्रकार हैं–

अपोहवाद– बौद्ध दर्शन के अनुसार शब्द का अर्थ 'अपोह' है। बौद्ध पदार्थ के स्वरूप के बारे में कहते हैं कि पदार्थ का स्वरूप न जाति है, न व्यक्ति है और न ही जातिविशिष्टता है। वह एक प्रकार का अपोह रूप अर्थ है। यह अपोह एक अस्पष्ट प्रतिमा की कल्पना है।

आकृतिवाद एवं जातिवाद– आकृतिवाद सिद्धान्त महर्षि जैमिनी तथा शबर स्वामी, द्वारा प्रतिपादित किया गया है। ''महर्षि शबर स्वामी ने 'गो' शब्द का अर्थ क्या है ? ऐसा प्रश्न करके 'सास्नादि से युक्त आकृति' गो शब्द का अर्थ है, यह उत्तर दिया है।''19 यहाँ विशेषण के आधार पर विशेष की पहचान होती है अर्थात् समान गुणों (विशेषण) जैसे सास्नादि के सास्नत्व जाति से गो आकृति रूप विशिष्ट व्यक्ति (विशेष) का अनुमान किया जा रहा है। अतः जैमिनी के अनुसार गौ, अश्व आदि व्यवहार का आधार आकृति है, यही आकृतिवाद है। सभी वस्तुओं का सामान्य तथा विशेष अर्थ होता हैं। इन दो प्रकार के अर्थ अर्थात् ''दो प्रकार'' की बुद्धि से वस्तु के दो आकार सिद्ध होते हैं– सामान्य आकार और विशेष आकार। सामान्य आकार 'जाति' और विशेष आकार व्यक्ति है। सामान्य (जाति) के बिना विशेष (व्यक्ति) नहीं हो सकते तथा विशेष के बिना सामान्य नहीं होते हैं। बाद के मीमांसकों के अनुसार शब्द को सुनने पर शब्द से जो अर्थ बोध होता है वह जाति (सामान्य आकार) है। ''जाति शब्द का अर्थ है; क्योंकि जाति से रहित व्यक्ति का बोध शब्द से कभी नहीं होता''18 शब्द अपनी अभिधा शक्ति से जाति का संकेत करता है। प्रभाकर एवं कुमारिल भट्ट दोनों दार्शनिक पद का अर्थ केवल जाति मानते हैं परन्तु व्यक्ति का बोध दोनों दार्शनिकों द्वारा अलग–अलग प्रमाणों से विवेचित है। प्रभाकर का व्यक्ति बोध के सम्बन्ध में मत है कि जाति बोध सामग्री से ही तुल्यवितिवेद्यता (समान सामाग्री ग्राह्यता या प्रत्यभिज्ञा) द्वारा व्यक्ति का बोध होता है जबकि कुमारिल भट्ट के मतानुसार व्यक्ति का बोध अनुमान से होता है। मीमांसा सिद्धान्त वाक्यस्फोटवादी सिद्धान्त है।

न्याय दर्शन में शब्द व अर्थ के बीच सम्बन्ध को स्वभाविक न मानकर सामाजिक (व्यवहारिक) माना गया है। नैयायिकों ने कहा है कि शब्द को सुनने पर श्रोता को जो–जो भी ज्ञान होता है, वह सभी अर्थ हैं। प्राचीन न्यायदर्शन अर्थात् महर्षि गौतम ने शब्दार्थ के तीन भेद किये हैं–

व्यक्त्याकृतिजात्यास्तु पदार्थः ।20

अर्थात् व्यक्ति, आकृति और जाति ये तीनों पद के अर्थ हैं। नव्य नैयायिकों ने जाति और व्यक्ति दोनों के सम्बन्ध रूप समवाय को शब्द का अर्थ बताया है। इनके अनुसार शब्द का श्रवण करने पर जाति एवं व्यक्ति दोनों का ज्ञान साथ–साथ समान रूप से होता है। उसमें कोई काल भेद या प्रक्रिया भेद नहीं है।

वाक्यार्थ– शब्दार्थ के अतिरिक्त व्याकरण एवं दर्शन दोनों में वाक्यार्थ का भी विशद विवेचन किया गया है। वाक्यार्थ के सम्बन्ध में समस्या यह है कि वाक्य का अर्थ बोध कराने वाली शक्ति अन्वय रहित पद अर्थों में है या अन्वित पदार्थों में है?इस सम्बन्ध में मीमांसा दर्शन में दो सम्प्रदायों प्रभाकर सम्प्रदाय तथा कुमारिल भ सम्प्रदाय में वि ेाश रूप से वाद–विवाद रहा है। दोनों सम्प्रदायों ने वाक्यार्थ ज्ञान

प्रक्रिया के लिये दो सिद्धान्त प्रतिपादित किये हैं। प्रभाकर का वाक्यार्थ ज्ञान प्रक्रिया सम्बन्धी सिद्धान्त अन्विताभिधानवाद कहलाता है तथा कुमारिल भट्ट का वाक्यार्थ सिद्धान्त अभिहितान्वयवाद कहलाता है।

अन्विताभिधानवाद– ''वाक्य घटक पद, अपने–अपने शुद्ध अर्थ को न बताकर परस्पर अन्वित (सम्बन्धित) होकर अर्थ को अभिधा शक्ति के द्वारा अभिहित (बताते) करते हैं अर्थात् अभिधा शक्ति के द्वारा पद 'अन्वित होकर अर्थ' का अभिधान करते हैं।''21 प्रभाकर पृथक–पृथक पदों तथा पदार्थों की सत्ता को अस्वीकार नहीं करते हैं। उनका कहना केवल यह है कि इन पदों पदार्थों का पृथक–पृथक ज्ञान होना असम्भव है। पदार्थों का ज्ञान वाक्य व्यवहार से ही होता है। वाक्य व्यवहार सदैव अन्वित अर्थ में ही होता है। वाक्य के सभी पद आकाँक्षा, योग्यता व सन्निधि द्वारा अन्वित होकर वाक्य व्यवहार द्वारा अपना अर्थ बोध कराते हैं। प्रभाकर के मत में पदार्थ (वाच्यार्थ) तथा वाक्यार्थ दोनों एक हैं। इसीलिये अन्विताभिधानवाद को 'वाच्यार्थवाद' भी कहते हैं। वाक्यार्थ कर्तव्य या आदेश से सम्बन्धित है। प्रभाकर वाक्यस्फोटवाद के समर्थक हैं।

अभिहितान्वयवाद– ''पदों से अभिहित (बताये हुए) पदार्थों का परस्पर अन्वय होता है –यही अभिहितान्वय का अर्थ है।''22 पदों के अपने–अपने अर्थ से भिन्न एक नया अर्थ वाक्यार्थ के रूप में प्रकट होता है। इस मत में पदार्थों का सम्बन्ध पदों से नहीं अपितु वक्ता के तात्पर्य के अनुसार होता है, जो पदार्थों से भिन्न एक नवीन अर्थ होता है अतः इसे तात्पर्यार्थवाद भी कहते हैं। कुमारिल भट्ट के अनुसार पदार्थ भेद मानना आवश्यक है क्योंकि वाक्यार्थ में पदों के अर्थ की अपेक्षा करनी पड़ती है कि इतना इस शब्द का अर्थ है, इतना इस शब्द का अर्थ है। यह निश्चय तभी हो सकता है जब पद अपने–अपने अर्थ को बताते हैं। पदों के अर्थ के बिना वाक्य का अपना कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं हैं। पद के प्रयोग के लिये ही वाक्य की रचना (उच्चारण) की जाती है। तात्पर्य शक्ति से ही वाक्यार्थ का बोध होता है। तात्पर्य शक्ति को अभिधा भाक्ति से पृथक माना गया है। अतः तात्पर्यार्थ एक नवीन अर्थ होता हैं। न्याय–वैशेषिक द ान भी अभिहितान्वयवाद का समर्थन करते हैं। कुमारिल भट्ट पदस्फोटवाद के समर्थक हैं।

भारतीय भाषा दर्शन एवं ध्वनिशास्त्र में विवेचित भाषा की इकाई वाक्य का शब्द या वर्ण एक गूढ़ एवं नित्य तत्त्व है। शब्द व शब्दार्थ की गूढ़ता को विभिन्न भाषा तत्त्व शास्त्रियों ने अपनी–अपनी दृष्टि से समझने का प्रयास किया है। सभी भाषा विद्वानों की अवधारणाओं का वर्णन एवं विश्लेषण करने पर सभी सिद्धान्त सैद्धान्तिक एवं व्यवहारिक रूप से उपयोगी हैं परन्तु भाब्द के सम्बन्ध में दर्शनशास्त्र में मीमांसकों का मत तथा ध्वनि शास्त्र में वाक्यस्फोटवादी मत सर्वाधिक औचित्यपूर्ण है। भर्तृहरि व प्रभाकर शब्द की नित्यता को स्वीकार कर वेदों व उपनिषदों में विवेचित अक्षर या शब्द ब्रह्म की रक्षा करते हैं। वेदों का संरक्षण तथा वेदों में निहित वेद वाक्यों की अर्थपूर्णता प्रभाकर के मत में परिलक्षित होती है। यदि शब्द पहले से विद्यमान नहीं होता तो उसकी अभिव्यक्ति भी नहीं हो सकती। वि व में प्रतिभासित सभी पदार्थों में एक ही ऊर्जा अंतर्निहित है, उस ऊर्जा या भाक्ति की मात्रा के कारण पदार्थ का आकार भिन्न है। विज्ञान द्वारा सिद्ध है कि वि व की कुल भाक्ति (ऊर्जा) में न ह्रास होता है न वृद्धि केवल रूप परिवर्तन होता है जिसके कारण वि व की विभिन्न वस्तुयें बनती हैं। इसीलिये कहा गया है कि यत् पिण्डे तत् ब्रह्माण्डे। भाब्द भी एक ऊर्जा है जो आका ा एवं वायु के माध्यम से ध्वनि रूप में प्रकट या अभिव्यक्त हो जाती है। जिस प्रकार रसायनिक क्रिया में ऊर्जा कभी नष्ट नहीं होती है अपितु एक रूप से दूसरे रूप में परिवर्तित हो जाती है उसी प्रकार शब्द या शब्द ब्रह्म रूपी वर्ण भी कभी न उत्पन्न होने वाला व कभी न नष्ट होने वाला तत्त्व है। भाब्द, स्फोट या ध्वनि के माध्यम से हमें उत्पन्न व नष्ट होता

हुआ प्रतीत होता है। अतः भाब्द नित्य एवं अविना ाी ऊर्जा है।

सन्दर्भ–सूची

1. गौतम (संवत् 2051). न्याय सूत्र, 1/1/7, न्याय एवं वै ोषिक द ार्न (सम्पादक–वेदमूर्ति तपोनिष्ठ पं0 श्रीराम भार्मा आचार्य एवं माता भगवती देवी भार्मा). भाान्तिकुंज, हरिद्वार : ब्रह्मवर्चस, पृ0सं0 17.
2. भर्तृहरि (2001). वाक्यपदीय ब्रह्मकाण्ड–1/1 (विवरणकार–डॉ0 ि ाव ांकर अवस्थी). वाराणसी : चौखम्बा विद्याभवन, पृ0सं0 1.
3. वात्स्यायन (1999). न्याय भाष्य सूत्र, 2/2/38, न्यायद ार्नम् (व्याख्याकार–सच्चिदानन्द मिश्र). दिल्ली : भारतीय विद्या प्रका ान, पृ0सं0 203.
4. कणाद (संवत् 2051). वै ोषिक सूत्र, 2/2/21, न्याय एवं वै ोषिक द ार्न (सम्पादक–वेदमूर्ति तपोनिष्ठ पं0 श्रीराम भार्मा आचार्य एवं माता भगवती देवी भार्मा). भाान्तिकुंज, हरिद्वार : ब्रह्मवर्चस, पृ0सं0 42.
5. जो ाी, हरि ांकर (वि0सं0 2021). प्रतिभाद ार्न. वाराणसी : चौखम्बा विद्याभवन, पृ0सं0 139.
6. मिश्र, श्री के ाव (1995). तर्कभाषा (व्याख्याकार–डॉ0 गजानन भाास्त्री मुसलगाँवकर). वाराणसी : चौखम्बा सुरभारती प्रका ान, पृ0सं0 190.
7. मिश्र, श्री के ाव (1995). तर्कभाषा (व्याख्याकार–डॉ0 गजानन भाास्त्री मुसलगाँवकर). वाराणसी : चौखम्बा सुरभारती प्रका ान, पृ0सं0 186.
8. तदैव.
9. वात्स्यायन (1999). न्याय भाष्य सूत्र, 2/2/12, न्यायद ार्नम् (व्याख्याकार–सच्चिदानन्द मिश्र). दिल्ली : भारतीय विद्या प्रका ान, पृ0सं0 183.
10. गौतम (संवत् 2051). न्याय सूत्र, 2/2/14, न्याय एवं वै ोषिक द ार्न (सम्पादक–वेदमूर्ति तपोनिश्ठ पं0 श्रीराम भार्मा आचार्य एवं माता भगवती देवी भार्मा). भाान्तिकुंज, हरिद्वार : ब्रह्मवर्चस, पृ0सं0 78.
11. मिश्र, श्री के ाव (1995). तर्कभाषा (व्याख्याकार–डॉ0 गजानन भाास्त्री मुसलगाँवकर). वाराणसी : चौखम्बा सुरभारती प्रका ान, पृ0सं0 448.
12. जो ाी, हरि ांकर (वि0सं0 2021). प्रतिभाद ार्न. वाराणसी : चौखम्बा विद्याभवन, पृ0सं0 314.
13. भर्तृहरि (2001). वाक्यपदीय : ब्रह्मकाण्ड–1/76 (विवरणकार–डॉ0 ि ाव ांकर अवस्थी). वाराणसी : चौखम्बा विद्याभवन, पृ0सं0 282.
14. जो ाी, हरि ांकर (वि0सं0 2021). प्रतिभाद ार्न. वाराणसी : चौखम्बा विद्याभवन, पृ0सं0 342.
15. तदैव, पृ0सं0 343.
16. भर्तृहरि (2001). वाक्यपदीय : ब्रह्मकाण्ड–1/68 (विवरणकार–डॉ0 ि ाव ांकर अवस्थी). वाराणसी : चौखम्बा विद्याभवन, पृ0सं0 253.

17. जो ी, हरि ांकर (वि0सं0 2021). प्रतिभाद ान. वाराणसी : चौखम्बा विद्याभवन, पृ0सं0 351.
18. पाण्डेय, डॉ0 प्रियम्वदा कुमारी (2002). भारतीय द ान भाब्द अर्थ एवं सम्बन्ध. दिल्ली : नाग पब्लि ार्स, पृ0सं0 102.
19. भट्ट, कुमारिल (2002). मीमांसा लोकवार्तिक (हिन्दी भाश्यकार–डॉ0 भयामसुन्दर भार्मा). वाराणसी : भारतीय विद्या संस्थान, पृ0सं0 282.
20. गौतम (संवत् 2051). न्याय सूत्र, 2/2/68, न्याय एवं वै ोषिक द ान (सम्पादक–वेदमूर्ति तपोनिष्ठ पं0 श्रीराम भार्मा आचार्य एवं माता भगवती देवी भार्मा). भाान्तिकुंज, हरिद्वार : ब्रह्मवर्चस, पृ0सं0 100.
21. मिश्र, श्री के ाव (1995). तर्कभाषा (व्याख्याकार–डॉ0 गजानन भाास्त्री मुसलगाँवकर). वाराणसी : चौखम्बा सुरभारती प्रका ान, पृ0सं0 206.

तदैव, पृ0सं0 205.